राजस्थान उच्च न्यायालय,

जयपुर पीठ

एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 2003/2024

सुनील दत्तात्रेय पुत्र श्री जी.पी. दत्तात्रेय राम, आयु लगभग 47 वर्ष, निवासी 74/27-ए, शिप्रा पथ, मानसरोवर, जयपुर (राज.)

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान राज्य, जरिये सचिव, पंचायती राज विभाग, राजस्थान, सचिवालय, जयपुर (राज.)
2. अतिरिक्त मुख्य सचिव, वित्त विभाग, राजस्थान सरकार, सचिवालय, जयपुर (राज.)
3. आयुक्त, राज्य बीमा एवं प्रावधायी निधि विभाग, राजस्थान सरकार, बनी पार्क, जयपुर (राज.)
4. निदेशक, पेंशन विभाग, ज्योति नगर, जयपुर(राज.)

----प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता की ओर से	:	श्री अक्षित गुप्ता एवं सुश्री प्रज्ञा सेठ
प्रतिवादीगण की ओर से	:	सुश्री सारा परवीन, श्री कपिल प्रकाश माथुर, एएजी की ओर से ।

न्यायाधिपति अनूप कुमार ढंड

आदेश

10/02/2025

रिपोर्ट योग्य

किसी कर्मचारी को वेतन का भुगतान न करना उसे उसकी आजीविका से वंचित करने के समान है। ऐसे व्यक्ति को बिना किसी उचित कारण के अधिकारियों के हाथों भूखा मरने नहीं दिया जा सकता।

भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 जीवन के अधिकार की गारंटी देता है। जीवन के अधिकार में आजीविका का अधिकार शामिल है। जीवन के अधिकार को सत्ता में बैठे व्यक्तियों की व्यक्तिगत सनक के अधीन नहीं किया जा सकता।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त जीवन के अधिकार का दायरा व्यापक और दूरगामी है। उस अधिकार का एक महत्वपूर्ण पहलू आजीविका का अधिकार है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति जीने के साधनों, यानी आजीविका के साधनों के बिना जीवित नहीं रह सकता।

1. याचिकाकर्ता के देय वेतन का भुगतान करने हेतु प्रतिवादियों को निर्देश जारी किए जाने के लिए प्रस्तुत आवेदनों (आई.ए. संख्या 1/2024 एवं 3/2024) पर मामले को सुनवाई हेतु प्रस्तुत किया गया है।

2. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि राजस्थान सिविल सेवा अपील अधिकरण, जयपुर (संक्षेप में, "अधिकरण") के समक्ष याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अपील को आदेश दिनांक 09.09.2021 द्वारा आंशिक रूप से स्वीकार किया गया था और प्रतिवादीगण को संशोधित वेतन आदेश की शर्तों के अनुसार 2016 के बाद याचिकाकर्ता का बकाया वेतन जारी करने का निर्देश दिया गया था, लेकिन काफी समय बीत जाने के

बावजूद, आज तक, अधिकरण द्वारा पारित आदेश की अनुपालना नहीं की गई है।

3. विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि इस न्यायालय ने भी, 16.02.2024 को प्रतिवादीगण को नोटिस जारी करते समय, प्रतिवादीगण को याचिकाकर्ता को वेतन का भुगतान न करने के मुद्दे पर विचार करने और नियमों के प्रावधानों के अनुसार उसका बकाया वेतन जारी करने के लिए उचित आदेश पारित करने और अगली तारीख पर न्यायालय को सूचित करने का निर्देश दिया था। अधिवक्ता का तर्क है कि उसके बाद एक वर्ष से अधिक समय बीत जाने के बावजूद, प्रतिवादीगण द्वारा याचिकाकर्ता को एक भी पैसा नहीं दिया गया है।

4. प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया और संबंधित प्रभारी अधिकारी से निर्देश प्राप्त करने के बाद, इस न्यायालय को अवगत कराया कि याचिकाकर्ता को अपना वेतन जारी करने के लिए कुछ फॉर्म भरने और अपेक्षित औपचारिकताएं पूरी करने के लिए कहा गया था, लेकिन वह ऐसा करने में विफल रहा, और इस कारण से, याचिकाकर्ता को वेतन जारी नहीं किया जा सका, इसलिए, इन परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता कोई अंतरिम राहत पाने का हकदार नहीं है।

5. बहस सुनी और विचार किया तथा रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

6. आजीविका का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत प्रत्याभूत जीवन के अधिकार का एक अभिन्न अंग है। प्रतिवादी-प्राधिकारी एक ओर याचिकाकर्ता की सेवाएं ले रहे हैं और दूसरी ओर, उसे वेतन देने से इनकार कर रहे हैं। ऐसा शोषण याचिकाकर्ता को उसकी आजीविका के

अधिकार से वंचित करने के समान है। इसलिए, प्रतिवादी द्वारा याचिकाकर्ता का उस अवधि का वेतन रोकने की कार्रवाई, जिसके दौरान उसने सेवाएं दी हैं, को अनुमोदित नहीं किया जा सकता। आज तक, प्रतिवादीगण याचिकाकर्ता को बिना वेतन दिए उसकी सेवाओं का उपयोग करना जारी रखे हुए हैं।

7. कर्मचारियों को वेतन या पेंशन का भुगतान केवल उनकी सेवा के दौरान वेतन के रूप में और सेवानिवृत्ति के बाद पेंशन के रूप में उनकी आजीविका चलाने के लिए होता है। यदि, पूरे या आंशिक वेतन या पेंशन को स्थगित कर दिया जाता है, तो यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत जीवन के अधिकार से इनकार करने के समान है। प्रारंभ में, आजीविका के अधिकार को भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता नहीं दी गई थी। लेकिन, बाद में इसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की न्यायिक व्याख्या द्वारा मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी गई।

8. भारत में न्यायालयों ने बार-बार यह माना है कि अनुच्छेद 21 संविधान के महान मौन में से एक है। आजीविका के अधिकार को सत्ता में बैठे व्यक्तियों की व्यक्तिगत सनक के अधीन नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त जीवन के अधिकार का दायरा व्यापक और दूरगामी है। उस अधिकार का एक महत्वपूर्ण पहलू आजीविका का अधिकार है क्योंकि, कोई भी व्यक्ति जीने के साधनों, यानी आजीविका के साधनों के बिना जीवित नहीं रह सकता। यदि आजीविका के अधिकार को संवैधानिक जीवन के अधिकार का हिस्सा नहीं माना जाता है, तो किसी व्यक्ति को उसके जीवन के

अधिकार से वंचित करने का सबसे आसान तरीका यह होगा कि उसे उसकी आजीविका के साधनों से निरस्त होने की हद तक वंचित कर दिया जाए।

9. **'मेनका गांधी बनाम भारत संघ' एआईआर 1978 एससी 597** में संप्रकाशित मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह व्यवस्था दी है कि आजीविका का अधिकार अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार के भीतर "जीवन" की अभिव्यक्ति में आएगा।

10. शोषण से मुक्त होकर मानवीय गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार अनुच्छेद 21 में अंतर्निहित है और यह राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों और विशेष रूप से अनुच्छेद 39 के खंड (ई) और (एफ) और अनुच्छेद 41 और 42 से अपनी जीवन शक्ति प्राप्त करता है और कम से कम, अतः, इसमें मानवीय गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार भी सम्मिलित होना चाहिए। ऐसा कोई भी कार्य, जो किसी व्यक्ति को भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्रत्याभूत संवैधानिक अधिकार के अभिन्न अंग के रूप में गरिमापूर्ण जीवन जीने के मूल अधिकार का उपभोग करने से वंचित करता है, उक्त अधिकार का उल्लंघन होगा।

11. वेतन/मजदूरी का अधिकार, जिसका एक व्यक्ति हकदार है, संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त उसके जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से इतना घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है, कि यह मानना उचित है कि आजीविका का अधिकार, सीमित संसाधनों वाले व्यक्तियों के मामले में, सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत उनके मौलिक अधिकारों का एक अभिन्न अंग है। अपने वेतन/मजदूरी के अलावा पर्याप्त साधनों वाले व्यक्तियों के मामले में, एक अलग दृष्टिकोण संभव हो सकता है, लेकिन उन व्यक्तियों के मामले में जो पूरी तरह से या काफी हद तक अपनी आजीविका

के लिए वेतन/मजदूरी पर निर्भर हैं, वेतन या मजदूरी पाने के अधिकार को संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत एक मौलिक अधिकार माना जाना चाहिए।

12. 'बेगार' को भारत के संविधान के अनुच्छेद 23 द्वारा प्रतिबंधित किया गया है और उक्त अनुच्छेद इसे संसद द्वारा बनाए गए कानून के अनुसार दंडनीय बनाता है। 'बेगार' का अर्थ है सरकार या किसी अधिकार-संपन्न व्यक्ति द्वारा बिना पारिश्रमिक दिए कराई गई मजदूरी या सेवा। संविधान के अनुच्छेद 23 के तहत 'बेगार' का अपराध गठित करने के उद्देश्य से, यह आवश्यक नहीं है कि उस वेतन या मजदूरी से पूरी तरह इनकार किया जाए जो उस व्यक्ति को देय हो सकती है जिससे काम लिया जाता है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि संविधान के अनुच्छेद 23 के तहत मौलिक अधिकार विफल न हो, 'बेगार' अभिव्यक्ति की उदारतापूर्वक व्याख्या करनी होगी और यदि किसी व्यक्ति को देय वेतन और मजदूरी के पर्याप्त हिस्से से जानबूझकर इनकार किया जाता है, तो 'बेगार' का अपराध कारित किया जा सकता है, यदि कार्यकर्ता को वेतन या मजदूरी से इनकार करने का कोई अन्य उचित कारण नहीं है। प्रतिवादीगण को याचिकाकर्ता को वेतन और मजदूरी से इनकार करने की अनुमति देना प्रतिवादीगण को संविधान के अनुच्छेद 23 के प्रावधानों का उल्लंघन करने की अनुमति देने के समान होगा। यह अस्वीकार्य है।

13. निस्संदेह, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने '**ओल्गा टेलिस बनाम बॉम्बे म्यूनिसिपल कॉर्पोरेशन' एआईआर 1986 एससी 180 के संप्रकाशनीय** मामले में आजीविका के अधिकार को भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत अधिकार माना है। इसे निम्नानुसार पुनरुत्पादित किया गया है;

> अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त जीवन के अधिकार का दायरा व्यापक और दूरगामी है। इसका मतलब केवल यह नहीं है कि जीवन को समाप्त नहीं किया जा सकता है, या छीना नहीं जा सकता है, उदाहरण के लिए, मृत्युदंड को लागू करने और निष्पादित करने से, सिवाय कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार। यह जीवन के अधिकार का केवल एक पहलू है। उस अधिकार का एक समान रूप से महत्वपूर्ण तथ्य आजीविका का अधिकार है क्योंकि, कोई भी व्यक्ति जीने के साधनों, यानी आजीविका के साधनों के बिना जीवित नहीं रह सकता। यदि आजीविका के अधिकार को संवैधानिक जीवन के अधिकार का हिस्सा नहीं माना जाता है, तो किसी व्यक्ति को उसके जीवन के अधिकार से वंचित करने का सबसे आसान तरीका यह होगा कि उसे उसकी आजीविका के साधनों से निरस्त होने की हद तक वंचित कर दिया जाए। ऐसा वंचन न केवल जीवन को उसकी प्रभावी सामग्री और सार्थकता से वंचित कर देगा बल्कि यह जीवन को जीना असंभव बना देगा। और फिर भी, यदि आजीविका के अधिकार को जीवन के अधिकार का हिस्सा नहीं माना जाता है, तो ऐसा वंचन कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार नहीं होना चाहिए। वह, जो अकेले जीना संभव बनाता है, उसे छोड़ दें जो जीवन को जीने योग्य बनाता है, उसे जीवन के अधिकार का एक अभिन्न अंग माना जाना चाहिए। किसी व्यक्ति को उसकी आजीविका के अधिकार से वंचित करें और आप उसे उसके जीवन से वंचित कर देंगे।

14. इसके अलावा दूसरा पहलू यह है कि क्या संविधान के ढांचे के तहत किसी को उसके द्वारा किए गए कार्य की मजदूरी से वंचित किया जा सकता है। ऐसा नहीं किया जा सकता। संविधान के अनुच्छेद 23 के परिप्रेक्ष्य में, जो ऐसे कार्यों के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करता है क्योंकि किसी व्यक्ति द्वारा किए गए कार्य के लिए मजदूरी का भुगतान न करना 'बेगार' के समान होगा, जो इस प्रावधान के तहत निषिद्ध है।

15. राज्य-प्राधिकारियों की ओर से यह काफी चौंकाने वाला और आश्चर्यजनक है कि वे 2016 से याचिकाकर्ता से काम ले रहे हैं और उसे उसके वेतन के एवज में एक पैसा भी नहीं दे रहे हैं। इस न्यायालय को राज्य के अधिवक्ता के इस तर्क में कोई वैध औचित्य नहीं मिलता कि याचिकाकर्ता वांछित औपचारिकताओं को पूरा करने में विफल रहा। इसके अलावा, प्रतिवादीगण द्वारा इस न्यायालय को संतुष्ट करने के लिए रिकॉर्ड पर कोई दस्तावेजी सबूत नहीं रखा गया है कि किस अवसर पर, याचिकाकर्ता को कुछ फॉर्म जमा करने या अपेक्षित औपचारिकताएं पूरी करने के लिए कहा गया था। प्रतिवादीगण की ओर से इस तरह की कार्रवाई, यानी, याचिकाकर्ता का वेतन रोकना, मनमाना है और इसे बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। प्रतिवादीगण का यह रुख इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 16.02.2024 के उल्लंघन में न्यायालय की अवमानना के समान भी है।

16. याचिकाकर्ता को 97 महीने के वेतन से वंचित करना या उस मामले के लिए किसी भी कर्मचारी को उसके वेतन से वंचित करना भारत के संविधान के अनुच्छेद 21, 23 और 300-ए के तहत निहित उसके अधिकारों का उल्लंघन होगा। यह सुस्थापित है कि मौलिक अधिकारों को किसी भी व्यक्ति द्वारा त्यागा नहीं जा सकता और इसलिए, किसी भी कल्पना से यह नहीं कहा जा सकता कि केवल कुछ फॉर्म न भरने और अपेक्षित औपचारिकताएं पूरी न करने, याचिका दायर करने में देरी, वेतन पाने के अधिकार को त्यागने के समान है। किसी भी नियोक्ता को कर्मचारियों को उनके उचित वेतन से वंचित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती, वह भी महीने दर महीने। राज्य-प्राधिकारियों को अपने कर्मचारियों के मौलिक अधिकारों और मानवाधिकारों का उल्लंघन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह अनुमति नहीं दी जा सकती कि अपने कर्मचारियों को उनके

विधिसम्मत मासिक वेतन के अधिकार से वंचित करने के लिए बहानों का सहारा लेते हुए औपचारिक आवरण के पीछे छिपा जाए।

17. प्रतिवादीगण को निर्देश दिया जाता है कि वे आज से एक महीने की अवधि के भीतर याचिकाकर्ता का बकाया वेतन तुरंत जारी करें, जिसमें विफल रहने पर, मामले को गंभीरता से देखा जाएगा और सचिव, पंचायती राज विभाग, राजस्थान; अतिरिक्त मुख्य सचिव, वित्त विभाग, राजस्थान सरकार; आयुक्त, राज्य बीमा एवं प्रावधायी निधि विभाग, राजस्थान सरकार; और निदेशक, पेंशन विभाग के खिलाफ अवमानना कार्यवाही शुरू की जाएगी। यदि वे इस आदेश का पालन करने में विफल रहते हैं, तो उन्हें अगली तारीख पर इस न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहने का निर्देश दिया जाता है।

18. यदि प्रतिवादीगण द्वारा उपर्युक्त निर्धारित अवधि के भीतर इस आदेश का अनुपालन नहीं किया जाता है, तो राजस्थान राज्य के मुख्य सचिव को निर्देश दिया जाता है कि वे अगले आदेश तक उपर्युक्त अधिकारियों के वेतन का भुगतान जारी न करें।

19. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रतिवादीगण याचिकाकर्ता को बकाया वेतन का भुगतान करने से पहले सभी अपेक्षित औपचारिकताएं पूरी करेंगे।

20. आवेदन (I/A Nos.1/2024 & 3/2024) का निस्तारण किया जाता है।

21. इस मामले को अनुपालना देखने हेतु 12.03.2025 को सूचीबद्ध करें।

22. इस आदेश की एक प्रति मुख्य सचिव, राजस्थान सरकार और सभी प्रतिवादीगण को आवश्यक कार्रवाई और इस आदेश की अनुपालना हेतु भेजी जाए।

(अनूप कुमार ढंड), J

आयुष शर्मा /176

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकरिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"